Chapter. 5

--- पंचम अध्याय

'साठोत्तरी कविता का शिल्प'

यदि कविता की वस्तु यथार्थ परक और जीवन के सन्निकट है तो यह अपेक्षित है कि उसका शिल्प भी उलझा हुआ न होकर कथ्य के अनुरूप ही सहज और यथार्थवादी हो। 'वस्तु' को जब अपने अनुरूप शिल्प मिल जाता है तो वह अधिक प्रभावशाली हो जाती है। शिल्प ही वस्तु को सामयिक रूप में प्रस्तुत कर पाता है। यदि 'वस्तु' और 'शिल्प' का तालमेल आपस में नहीं बैठता तो कविता में जीवन्त तत्व नहीं आ पाते। साठोत्तरी कविता की वस्तु में जीवन की धड़कनें विद्यमान हैं। वह आज के आदमी का सही प्रतिनिधित्व करती है। साठोत्तरी कविता का समग्र अध्ययन करने में यह बात बहुत मायने रखती है कि उसकी वस्तु की परीक्षा करने के बाद उसके शिल्प से भी सीधा (~~साक्षात्कार करने के बाद उसके शिल्प से भी सीधा~~) साक्षात्कार किया जाय। यह साक्षात्कार निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत संभव है---

प्रतीक
बिम्ब
उपमान
छन्द
लम्बी कविता

१- परम्परागत प्रतीक:

युग की परिस्थितियाँ, प्राकृतिक एवं सामाजिक वातावरण, ऐतिहासिक घटनाक्रम, राष्ट्रीय चेतना, परिवेशगत दबाव एवं कवि की व्यक्तिगत रुचि आदि का प्रतीकों पर प्रभाव पड़ता है। परिणामस्वरूप कुछ नये प्रतीकों का जन्म होता है, कुछ पुराने प्रतीकों में नया भाव ढूँढा जाता है तथा कुछ प्रतीक समय के साथ विलुप्त भी हो जाते हैं। युवा कवियों ने पहाड़, किरन, सूरज, सर्प आदि परम्परागत प्रतीकों का उपयोग प्रचुर मात्रा में किया है लेकिन ये प्रतीक किसी पुराने अर्थ या संकेत से न जुड़े रह कर एक नया अर्थ देते हैं। पूर्ववर्ती कविता (छायावादोत्तर) में पहाड़, सर्प, सूरज क्रमश: बाधाओं, आस्तीन के साँपों, परिवर्तन के प्रतीक माने जाते रहे हैं। युवा कवियों ने तनिक हेर-फेर के साथ इन्हें एक नया सन्दर्भ और नया अर्थ दिया है। इसके फलस्वरूप जगदीश चतुर्वेदी के लिये पहाड़ अजेय व्यवस्था [१] का प्रतीक बनता है और कैलाश वाजपेयी के लिये सर्प युद्धकामी और विध्वंसक शक्तियों [२] का अर्थ देने लगता है। कुछ युवा कवियों ने एक नहीं अपितु, अनेक प्रतीकों के मिले जुले प्रयोग से कविता को अतिरिक्त अर्थ देने का प्रयास किया है। कई प्रतीकों से युक्त कुछ कवितायें परिचित प्रतीकात्मकता के भीतर नवीन संकेतों को छिपाये बैठी हैं। श्री हर्ष की निम्नलिखित पंक्तियों में 'आग का गोला' -- सूरज पूर्ण परिवर्तन या क्रान्ति का प्रतीक

---

(१) एक पहाड़ में छेद करने की इच्छा बहुत बार हुई है और
मैंने एक पैने चाकू से अपनी हथेली पर ही वार कर दिया है।
--- निषेध- समकालीन आलोचकों के नाम- जगदीश चतुर्वेदी - पृष्ठ-३३

(२) त्रस्त सभ्यता के विक्रान्त अन्धकार में
वहां जहां अभी तक
तटस्थ किरण फूटी थी
देखता हूं अकस्मात
एक सर्प सरक आया है
--- संक्रान्त - युद्ध चेतना: एक दार्शनिक पश्चाताप- पृष्ठ-८०

बनकर सामने आया है। धुंआ कौवों की कांव-कांव आदि क्रान्ति को रोकने वाली प्रतिगामी शक्तियाँ हैं--

हर सुबह - देखता हूं
लम्बी चिमनियों का मोटा धुंआ
और कौओं की कांव-कांव
घेर लेती है - पूर्व की ड्योढ़ी को
फिर भी - ठिठुरते तालाब की
घेराबन्दी तोड़-
उग जाता है - आग का गोला[1]

साठोत्तरी कविता के प्रतीक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के सत्य को खोजते हैं। राजनीतिक स्वतंत्रता मिलने के बाद जनता और शासक के बीच के रिश्ते को प्राय: भेड़ और भेड़िये के प्रतीक द्वारा स्पष्ट किया गया है। भेड़ जनता की निरीहता और विवशता को व्यंजित करती है तथा भेड़िया सत्ताधारी वर्ग की निर्ममता और चालाकी को उजागर करता है।[2] युवा कवियों ने सामाजिक जीवन में व्याप्त बेईमानी, कारोबारीपन और स्वार्थपरता को भी प्रतीकों के जरिये उद्घाटित किया है। सामाजिक अंधेर को अंधेरे के माध्यम से तथा पैसे को ईमान बताने वाले सिद्धान्तों और नियमों को

- -

(१) विचार कविता की भूमिका- प्रतिबंध - -पृष्ठ-१५२

(२)क- मैंने

मेड़ियों को आदमियों के वस्त्र पहनाकर
निरस्त्र
उनसे भाईचारा बढ़ाना शुरू कर दिया
और यहीं मुझसे गलती हो गयी

---जूझते हुए -पश्चाताप - सुरेन्द्र तिवारी पृष्ठ-३४

ख- जनता क्या है ?

जो दूसरों की ठंड के लिए। अपनी पीठ पर। ऊन की फसल ढो रही है

---संसद से सड़क तक - पटकथा - 'धूमिल' पृष्ठ-११४

`चांदी के चूहे` जैसे प्रतीकों से इंगित करने में युवा कवि की प्रतीक योजना परम्परा से नवीनता की ओर प्रमाण की गवाही देती है ---

१- जुए में रोशनी हार आया है
अंधियारा
और अब अफीम पीकर बैठा है सरेआम
किसी की कुछ सुनता ही नहीं ।[1]

२- और तुम्हारी सभ्यता के चांदी के चूहे
मेरी पिंडलियों की नीली नसों को
काटकर जा चुके हैं ।[2]

सर्वथा नवीन निजी और विशिष्ट प्रतीक

साठोत्तरी युवा कवियों ने सामयिक संदर्भों के अनुकूल अनेक नये प्रतीकों को गढ़ा है । ये सभी प्रतीक या तो व्यवस्था द्वारा लुंज-पुंज बना दिए गए आदमी की नियति को पढ़ते हैं और इसी संदर्भ में अपने व्यवस्था-विरोध का प्रदर्शन करते हैं या पूर्ववर्ती काव्य-प्रतीकों से अपने को बिल्कुल काटकर एक नया प्रतीक संसार निर्मित करने के लिए सचेष्ट दिखाई पड़ते हैं । अधिकतर प्रतीक वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था की तर्क पूर्ण, किन्तु तीखी के लिए इस्तेमाल किए गए हैं । ऋतुराज की कविता `दिनचर्या` में नया घड़ा स्वतंत्रता के बाद अस्तित्व में आई नई व्यवस्था का प्रतीक है । इस रिसते हुए घड़े से बहकर हमारी मेहनत और उपलब्धि का मीठा पानी असफलता, हताशा और निराशा की नाली में जा चुका है ।[3] व्यवस्था के सर्वभक्षी रूप को नागार्जुन ने अजगर के प्रतीक से अभिव्यक्त किया है[4]

(१) लहर : कवितांक १९६७ - नारायणलाल परमार
(२) अकविता-३- अस्वीकृति - अतुल भारद्वाज - पृष्ठ-३४
(३) यह नया घड़ा किसका है । किसका है यह रिसता हुआ नया घड़ा ?
हमारे कुए का मीठा पानी । तुमने नाली में बहाया है
--- आवेग-६, दिन चर्या -- पृष्ठ-१०
(३) उत्तरार्द्ध ६, नवम्बर, १९७३ - -- पृष्ठ-

'टेलीफोन पर' कविता में लीलाधर जगूड़ी ने व्यवस्था की भयानकता और मजबूती को अजगर के प्रतीक से व्यक्त किया है। इनके [illegible] सोच विचार का नतीजा यह है कि खैरियत तब तक है जब तक व्यवस्था के इशारों पर नाचा जाय ---

Smt. HANSA ... LIBRARY
... S. UNIVERSITY OF BARODA

अजगर को गुफा में घुसने दो
सब ठीक हो जाएगा [१]

ठीक मुक्तिबोध का ब्रह्मराक्षस यद्यपि कवि-मन की अभिशप्त नियति को उजागर करता है फिर भी व्यवस्था के बाहरी दबाव की प्रतीति इससे होती है। ब्रह्मराक्षस की ट्रेजिडी भीतरी ही नहीं बाहरी भी है।[२] व्यक्ति की इस बाहरी त्रासदी के लिए व्यवस्था की गड़बड़ सर्वाधिक जिम्मेदार है। युवा कवियों ने आम आदमी के ऊपर व्यवस्था के बेजा दबाव को कभी 'पेपरवेट'[३] के प्रतीक से उभारा है और कभी व्यवस्था द्वारा बेकार बनाए गए आदमी की नियति को 'नकली टांग' का प्रतीक दिया है। युवा कवि को यह जानकर हैरत होती है कि व्यवस्था का आदमी बनने के लिए व्यक्ति का अपाहिज होना जरूरी है ---

मुझे नहीं मालूम था कि तुम्हारा आदमी होने के लिए
अपाहिज होना जरूरी है
अब जो टांग तुमने मुझे बाजार से लाकर दी है
इसको पलोसते हुए
न मैं मां को याद कर सकता हूं- और न पिता का पुण्यस्मरण[३]

- -

(१) नाटक जारी है - पृष्ठ- ६३
(२) पिस गया वह भीतरी। औ बाहरी दो कठिन पाटों बीच,
ऐसी ट्रेजिडी है नीच।।
--- चांद का मुंह टेढ़ा है - पृष्ठ-२६
(३) मेरी जिन्दगी की पाण्डुलिपि पर। पारदर्शी एक पेपरवेट ?
--- विचार कविता की भूमिका- पारदर्शी पर्त- रामावतार चेतन- पृ० २१०

बाध्य निष्क्रियता का प्रतीक जान पड़ता है ।

मुक्तिबोध के अन्य प्रतीकों में तटवृक्ष, पागल मनुष्य गांधी, तिलक, मां और शिशु विशेष उल्लेखनीय हैं । 'यह गौर करने की बात है कि प्राय: हर कविता में नायक के अलावा एक प्रतीकात्मक और आत्मवादी चरित्र है । इस चरित्र के माध्यम से ही कवि अन्तकरण को अपील करता है । लेकिन यह अपील सिर्फ भावात्मक नहीं, बल्कि इसे इस विश्लेषण द्वारा समर्थन मिलता है जो यह चरित्र अक्सर प्रस्तुत करता है ।'[१] अंधेरे में कविता के नायक का दोहरा रूप उपर्युक्त कथन को प्रमाणित करता है । नामवरसिंह की यह पकड़ बिल्कुल सही है कि अंधेरे में का काव्य नायक एक आत्मनिर्वासित व्यक्ति है जिसके आत्मनिर्वासन का प्रतीक उसका गुहावास है ।[२] इसका काव्य नायक 'मैं' और 'वह' इन दो टुकड़ों में बांटा हुआ है । 'मैं' आत्मवादी की भूमिका निभाता है और सिरफिरा पागल जैसे प्रतीक उसका साथ देते हैं । एक गहरे और लम्बे अंधेरे से गुजरता हुआ 'मैं' जो कि एक तरह से बौद्धिकता का प्रतीक है इस नतीजे पर पहुंचा है ---

कविता में कहने की आदत नहीं, पर कह दूं
वर्तमान समाज में चल नहीं सकता ।
पूंजी से जुड़ा हुआ हृदय बदल नहीं सकता,[३]

बिम्ब ::-

तीसरा सप्तक के वक्तव्य में केदारनाथ सिंह ने लिखा है : 'प्राचीन काव्य में जो स्थान 'चरित्र' का था, आज की कविता में वही स्थान

---

(१) फिलहाल - अशोक वाजपेयी - पृष्ठ - १२१-२२
(२) मुक्तिबोध का रचना संसार - अंधेरे में परम अभिव्यक्ति की खोज पृ० २५
(३) चांद का मुंह टेढ़ा है - अंधेरे में पृष्ठ - २८३-२८४

'बिम्ब' अथवा 'इमेज' का है।'[1] नयी कविता में बिम्बों की बहुलता उक्त कथन को प्रकाशित भी करती है लेकिन नये कवियों ने अतिरिक्त उत्साह दिखाते हुए बिम्ब पर इतना अधिक जोर दिया कि कालान्तर में इसकी रचनात्मक सामर्थ्य और उपयोगिता पर संदेह किया जाने लगा है। अशोक वाजपेयी की स्थापना है, 'नयी कविता में बिम्बों और प्रतीकों की ऐसी भरमार हो गई थी कि कविता शब्दाडंबर होने लगी थी और उसकी अनुभवात्मक तात्कालिकता नष्ट सी हो गई थी।'[2] नामवरसिंह ने भी बल देकर लिखा है कि छठे दशक के अन्त और सातवें दशक के प्रारम्भ में उत्पन्न विषम सामाजिक स्थितियों की चुनौती के सामने बिम्ब विधान कविता में अप्रासंगिक सिद्ध होने लगा था।[3] इस कथन से ऐसा लग सकता है कि साठोत्तरी कवियों ने बिम्ब बहिष्कृत कर दिया है जब कि वास्तव में बात ऐसी नहीं है। वस्तुत: बिम्ब के सम्बन्ध में इसके समर्थक और विरोधी इतने उलझे हुए हैं कि बिम्ब को लेकर उन्होंने भ्रम का ही सृजन किया है। बिम्ब कविता का पर्याय नहीं है जैसा कि केदारनाथ सिंह जैसे नये कवियों ने माना है।[4] और न वह कविता में बिल्कुल अनावश्यक और अप्रासंगिक ही है। पाश्चात्य समीक्षक सी० डे० लेविस ने बिम्ब को सम्पूर्ण काव्य-व्यापार से सम्बद्ध करके देखा है लेकिन बिम्ब को ही कविता मान लेने का दुराग्रह उनमें नहीं है। गोविन्द द्विवेदी ने बिम्ब को काव्य-वस्तु से जोड़ते हुए तथा इसे कविता का एक स्वाभाविक गुण मानते हुए लिखा है--'बिम्ब किसी की आत्मीय अनुभूति के संदर्भ में वह ऐन्द्रिय रचना, पद्धति है, जिसके पीछे कवि के अन्त:करण का दीर्घ कालीन आत्म-संघर्ष तथा शक्तिशाली वासना की सत्ता मौजूद रहती है, और वह

- -

(१) तीसरा सप्तक - सं० अज्ञेय - पृष्ठ- ११६

(२) फिलहाल - पृष्ठ- १३

(३) कविता के नये प्रतिमान - काव्य बिम्ब और सपाटबयानी पृ० ११३

(४) आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब विधान- पृष्ठ- २१

कविता के अन्तर्गठन का अर्थ के स्वायत्त रूप में अविभाज्य गतिशील बनाए रखता है ।[1] इस व्यवस्था में बिम्ब की सही समझ विद्यमान है । बिम्ब सदैव कविता का एक अनिवार्य अंग रहा है । साठोत्तरी कवियों और समीक्षकों ने भी कविता में विचार तत्व पर बल देने के बावजूद बिम्ब को एकदम अस्वीकार नहीं किया है । चन्द्रभूषण तिवारी ने बिम्ब सम्बन्धी नामवरसिंह के विचारों की आलोचना करते हुए लेनिन के इस कथन को साक्ष्य बनाया है - कि चेतना वस्तु जगत को बिम्बित करती है (Consciousness reflects)। उन्होंने लिखा है "पुन: चेतना के स्तर पर बिम्बित होने के क्रम में उसकी समग्रता, उनके अन्तर्सम्बन्ध और सारतत्व की जानकारी उन्हें और प्रगाढ़ करती है और अन्तत: व्यक्त होने के लिए वह सारी सामग्री और इस अर्थ में इनकी समग्रता रूपात्मक होकर ही सामने आती है - यह कार्य बिम्ब-विधान द्वारा ही संभव है ।"[2] अगली कविता के प्रस्तोता डॉ० ओमानन्द सारस्वत ने भी बिम्ब विधान के द्वारा रस सृष्टि की बात स्वीकार की है ।[3] युवा कवि राजीव सक्सेना ने विचार कविता की प्रासंगिकता को रेखांकित करते हुए संवेदन को एकांकीपन इतिवृतात्मकता और ह्रासोन्मुख विचारों से मुक्त करने तथा उसके वाध्य संदर्भों को समझने के साथ - साथ उसके लिए उपयुक्त बिम्ब प्रतीक चुनने की आवश्यकता प्रतिपादित की है।[4] इस प्रकार स्पष्ट है कि साठोत्तरी कविता में नयी कविता की रूढ़ बिम्बधर्मिता को भले ही अस्वीकार किया गया हो, बिम्ब के महत्व को स्वीकारा गया है ।

बिम्ब के बारे में बहुत बड़ा भ्रम यह है कि यह अभिव्यक्ति का

---

(१) नयी कविता में बिम्ब का वस्तुगत परिप्रेक्ष्य - पृष्ठ- ७५

(२) विचार कविता की भूमिका, कविता वैचारिक माध्यम के रूप में पृ० ६३

(३) अगली कविता-२, सितम्बर, १९६५ - दिसम्बर, १९६५- पृष्ठ- ५

(४) विचार कविता की भूमिका, विचार कविता की अवधारणा - पृष्ठ- ५३

बाह्य या ऊपरी साधन मात्र है। वास्तव में बिम्ब को शिल्प से सम्बद्ध होते हुए भी काव्य-रचना की आन्तरिकता से बहुत गहरे जुड़ा हुआ है अत: बिम्बों का वर्गीकरण इतनी आसानी और स्थूलता से नहीं किया जा सकता जितनी अलंकारादि कविता के कलात्मक प्रसाधनों के संदर्भ में बरती जाती है। हेनरीवेल्स, आई० ए० रिचर्ड्स, क्यूजर, फोगल आदि विदेशी समीक्षकों ने बिम्ब को अनेक वर्गों में बांटा है किन्तु उनमें से शायद ही कोई निर्दोष हो। अधिक से अधिक ऐन्द्रिय संवेदन को आधार बनाकर किये गए क्यूजर के वर्गीकरण में कुछ सार दिखाई देता है।[1] वास्तव में कविता की वस्तु प्राय: या तो मानव जीवन से सम्बन्धित होती है, कभी-कभी उसमें मानवेतर (प्रकृति आदि) जीवन भी सम्मिलित होता है। इसी प्रकार अभिव्यक्ति के माध्यम बिम्ब आदि भी मुख्य रूप से रोजमर्रा के जीवन से लिए जाते हैं और गौड़ रूप से उन्हें मानवेतर संदर्भों से उठाया जाता है। इस आधार पर हम चाहें तो बिम्ब को दो मोटे वर्गों में बांटा जा सकता है ---

१- मानव जीवन संदर्भों से संपृक्त बिम्ब

२- मानवेतर बिम्ब या प्राकृतिक बिम्ब

राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक संदर्भों से गुजरकर नयी स्थितियों की चुनौती स्वीकार करने तथा आज की मानव नियति से सीधा साक्षात्कार करने के उद्देश्य से कवि जिन काव्य-बिम्बों की रचना करता है वे मानवीय जीवन के बिम्ब कहे जाते हैं। इस प्रकार के बिम्ब चाहे कहीं से लिए गए हों उनमें निहित बोध मानवीय यथार्थ से सम्पृक्त है। मानवेतर बिम्बों के अन्तर्गत प्राय: प्रकृति से लिये गए उन बिम्बों की गणना होती है जिनका मानव जीवन की मुश्किलों, खुशियों आदि से कोई घनिष्ट सरोकार नहीं होता है।

---

(१) क्यूजर ने सात प्रकार के बिम्बों की कल्पना की है - चाक्षुष बिम्ब, श्रवण बिम्ब, स्पर्श बिम्ब, गंध बिम्ब, स्वाद बिम्ब, थर्मल बिम्ब और काइनेस्थेटिक बिम्ब।

i) राजनीतिक विसंगतियों को उभारने वाले बिम्ब

साठोत्तरी कविता में राजनीतिक सच को विस्तार दिया गया है। अत: यह आकस्मिक नहीं है कि बहुत से बिम्ब केवल राजनीतिक विसंगतियों को बेनकाब करने के लिए लाए गए हैं। चाहे वह 'सिरकटे मुर्गी की तरह फड़कते हुए जनतंत्र'[१] की चर्चा हो अथवा 'संसद से लकड़बग्घों'[२] के निकलने की बात कहती हो, सर्वत्र बिम्ब-योजना कुत्सित राजनीति और स्वतंत्रता के नाम पर थोपे गये कुछ लोगों के मनमानेपन पर अनेक बिम्बों के माध्यम से प्रहार किया है। वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था से असंतुष्ट युवा कवि कभी तो सपाटबयानी के जरिये अपना आक्रोश व्यक्त करता है और कभी अपने विरोध को प्रभावशाली और धारदार बनाने के लिए उपयुक्त बिम्बों की रचना करता है। रमेशगौड़ की निम्नलिखित पंक्तियाँ किंचित अतिरेक के साथ राजनीतिक यथार्थ के एक विशिष्ट पहलू को उद्घाटित करती हैं ---

मेढ़ों का जुलूस पूरे जोर से गाता है -
राष्ट्रीय गान सदन में
विभीषणों का राजतिलक हो रहा है। और
सदन के बाड़े में आवारा सांड़ चबा रहे हैं --
देश का नक्शा और संविधान और राष्ट्रध्वज।[३]

---

(१) सिर कटे मुर्गी की तरह फड़कते हुए जनतंत्र में
सुबह
सिर्फ, चमकते हुए रंगों की चालबाजी है
--- संसद से सड़क तक, जनतंत्र के सूर्योदय में- 'धूमिल' - पृष्ठ-२५

(२) मैं देखता हूं
कुछ लकड़बग्घे संसद से निकलकर
पहुंच गए हैं घर रैल के
--- देहान्त से हटकर - प्रतीकों के जंगल में - कैलाश वाजपेयी- पृष्ठ-

(३) निर्णय- कहीं कुछ नहीं होता - पृष्ठ-१८६

जनसाधारण की आवश्यकताओं और आशाओं के पूर्ण न होने का दायित्व किस पर है, साठोत्तरी कवि ने उस अपराधी को ढूंढ निकालना चाहा है जिसकी साजिश जन जीवन को यातनापूर्ण बना रही है लेकिन यह कार्य आसान नहीं है। सही अपराधी का नाम ले देने के बाद कविता सुरक्षित नहीं रह पायेगी। इस व्यवस्था और आतंक की मिली-जुली अनुभूति को धूमिल ने एक सशक्त बिम्ब के माध्यम से भली प्रकार प्रस्तुत किया है ---

- - - - - - - - - - - - -

नाम लेने के लिए
कविता, सिर्फ उतनी ही देर तक सुरक्षित है
जितनी देर, कीमा होने से पहले,
कसाई के ठीहे और तनी हुई गंडास के बीच
बोटी सुरक्षित है।[१]

युवा पीढ़ी को जिनके हाथों पीड़ा और यातना मिली है, उसके वर्तमान को जिन खूनी मगरमच्छों ने गंदला किया है उनसे वह अपरिचित नहीं है। व्यवस्था के इस आततायी पक्ष को पौराणिक खलनायकों के माध्यम से भी चित्रित किया गया है।[२] युवा कवि को अपनी अभिशप्त नियति का पता है और वह तमाम अभिशापों, कठिनाइयों और यातनाओं

- -

(१) संसद से सड़क तक, मुनासिब कार्यवाही - पृष्ठ-६३

(२) सुबह की खुशनुमा द्रौपदी को
समय का दु:शासन नंगा कर रहा है,
सांझ की सलोनी सीता को
खुदगर्ज रावण उठा ले गया है

--- सुबह होने से पहले, प्रसव की स्थिति और मेरा देश- सव्यसाची- पृ० ४१

से मुक्त होने के लिए कृतसंकल्प है ---

हमारी राह का -
एक सिरा बिच्छू - घाटी है
और दूसरा - अंध गुफा।
आश्रय के नाम पर मिली है
सांपों की कुंडलियों में कसी हुई टहनियां
विषधर्मा बिच्छुओं से लदी-फदी पत्तियों की छांव
एक मात्र पाथेय - घुन लगे पांव [1]

इस प्रकार कवियों ने परिवेश की भ्रष्टता, रोज नई गढ़ी जा रही साजिशों और उनके बीच जीवित रहने की छटपटाहट को ईमानदारी से अंकित किया है। तथाकथित जननायकों और कर्णधारों के कारनामों ने कवि के मन से देश-भक्ति या राष्ट्रीयता जैसे भावों को दूर भगा दिया है। ऐसे परिवेश में आततायियों के विरुद्ध संघर्ष की शुरुआत हो चुकी है। मलयज की कविता 'इसका कुछ अर्थ है' में इस विरोध को एक संश्लिष्ट बिम्ब का रूप दिया गया है ---

वे लहू को छलनी से छान रहे हैं
जहां हड्डियां स्नायु - तन्तुओं से जुड़ती हैं
वहां की चमड़ी फट गयी है और कोहनी
झण्डे की तरह तनी हुई हवा में
कुछ सूंघ रही है वे एक पेड़ से

(१) ---- आजादी के बाद
देश - भक्ति
मेरे कंधे से सिर टिका कर सो गयी है
--- नाटक जारी है, इस व्यवस्था में - लीलाधर जगूड़ी - पृष्ठ - ५५

बांधी गयी पोटली में से
काटे निकाले रहे हैं जबानें
ऐंठ गई हैं खून टपकती हुई खालों को
पसीने में उबाल रहे हैं [१]

राजनीतिक संदर्भों से जुड़े हुए बिम्बों को ध्यान से देखने पर एक बात बहुत स्पष्ट हो जाती है कि अधिकतर बिम्ब भयावह और क्रूर हैं। निश्चय ही बिम्बों का भयानक और लोम हर्षक स्वरूप लगना व्यवस्था की भयानकता को रेखांकित करने के लिए है। धूमिल, रमेश गौड़, मलयज, सव्यसाची, कैलाश वाजपेयी, रघुवीर सहाय, वेणुगोपाल आदि के काव्य-बिम्बों को देखकर यह समझना कठिन नहीं है कि परिवेश की भयानकता और जटिलता से साक्षात्कार कराने के लिये इन्होंने बिम्बों का सही और संभावनापूर्ण उपयोग किया है। युवा कवि में किसी भी प्रकार का मोह नहीं है और न आरोपित आशावाद को उसने पाल रखा है। अत: कोमल अनुभूतियों के बिम्बों की अनुपस्थिति सर्वथा स्वाभाविक है। बहुत ढूंढने पर एकाध कोमल और अनुभूतिपरक बिम्ब भी मिल जाते हैं जिनके माध्यम से व्यवस्था में किसी क्रान्तिकारी परिवर्तन की आशा या प्रतीक्षा व्यक्त हुई है।

ii) आर्थिक सामाजिक स्थितियों के बोधक बिम्ब

समाज में हो रहे आर्थिक शोषण और उसके फलस्वरूप आम आदमी के सामने खड़ी दैत्याकार मुश्किलों को युवा कवि ने अनदेखा नहीं किया है। बहुत से बिम्ब ऐसे हैं जो एक ओर आर्थिक असमानता और शोषण की क्रूरता को रेखांकित करते हैं तो दूसरी ओर जनसाधारण की व्यवस्था का मार्मिक कथन भी उनके माध्यम से हुआ है। धूमिल जैसे प्रतिबद्ध कवियों में इस प्रकार के बिम्ब प्रचुरता से उपलब्ध होते हैं।

---

(१) आवेग-६ --- पृष्ठ-७७

सामाजिक संदर्भ में मानव नियति का साक्षात्कार करते हुए युवा कवि ने व्यक्ति और समाज की जो तस्वीर पेश की है उसके बनाने में बिम्बों का उपयोग भी किया गया है। साठोत्तरी कविता के बिम्बों का पूर्व की कविता से अलगाव प्रदर्शित करते हुए डॉ० गोविन्द द्विवेदी कहते हैं कि 'नयी कविता' का अधिकांश यदि निरर्थक बिम्ब श्रृंखलाओं का निर्माण करता है तो इसलिए कि कवियों में अपने समय की जटिल सच्चाइयों से साक्षात्कार करने की कायरता रही है। वह मानवीय दृष्टि से विपिन्न है तो इसीलिए कि उसमें समकालीन मनुष्य की हालत से उलझने का साहस दिखाई नहीं देता।'[1] साठोत्तरी कविता का व्यक्ति बड़ा असहाय, पीड़ित और संत्रस्त है। उसकी इस नियति को जो बिम्ब प्रस्तुत करते हैं वे जिन्दगी के आसपास से लिए गए हैं। यदि व्यक्ति की व्यवस्था को 'मकड़ी के जाले में अटकी हुई मक्खी'[2] की स्थिति से व्यक्त किया गया है तो उसकी असहायता का अहसास धोबी की जर्जरित अरगनी पर टंगे कुर्ते से कराया गया है।[3] कभी व्यक्ति की यातना यमदूतों की पकड़ में आई आत्मा की तकलीफ से जोड़ी गई है[4] तो कभी व्यक्ति के व्यर्थ और बेमानी अस्तित्व का बोध जूते से निकाले हुए पांव द्वारा कराया गया है।[5] कभी व्यक्ति के अस्तित्वहीनता को भी कवि ने बिम्ब द्वारा उभारा है।[6] परिवेश में

- -

(१) नयी कविता में बिम्ब का वस्तुगत परिप्रेक्ष्य- पृष्ठ-८८

(२) हड्डियों में छिपा ज्वर- मकड़ी के जाले में - चन्द्रकान्त देवताले-पृ०१०

(३) प्रारम्भ- सिकुड़नों का अहसास- नरेन्द्रधीर पृष्ठ-६३

(४) एक उठा हुआ हाथ, चीरफाड़ - भारतभूषण अग्रवाल- पृष्ठ-६१

(५) जूते से निकाले गये पांव - सा / महकता हूं
--- संसद से सड़क तक - एकान्त कथा - धूमिल- पृष्ठ-२५

(६) मैं कभी बसन्त था / पर मेरे चरण रुके / किसी एक पेड़ के पास / और बस / वहां खड़े - खड़े / मैं पतझर हो गया
--- कल्पवृक्ष - पहाड़ी रास्ता - रवीन्द्रनाथ त्यागी- पृष्ठ-७४

व्याप्त षड्यंत्रों और दुरभिसंधियों से जूझते व्यक्ति की अन्तिम परिणति को जिस बिम्ब के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है वह अत्यन्त स्वाभाविक और संवेद्य है – – –

एक – एक चौ रस्ते पर
    तोड़ता हूं
        दम – –
            सूखे हुए नल के
                नीचे
                    जैसे
                        कुत्ता[1]

सामाजिक परिवेश को निर्ममता और ईमानदारी के साथ प्रस्तुत करने के लिए युवा कवियों ने खण्डित अथवा लघु बिम्बों का सहारा लिया है। इस प्रकार के बिम्बों को बड़ी आसानी से दो वर्गों में अलगाया जा सकता है। कुछ बिम्ब नगर और महानगर के जीवन के उपकरणों से बने हैं जब कि कुछ लोक-जीवन से जुड़ने की गवाही देते हैं। ऐसा नहीं है कि कुछ कवियों ने केवल लोक-जीवन के बिम्ब उकेरे हैं या कुछ के बिम्ब नगरीय और महानगरीय परिवेश तक ही सीमित हैं। वास्तव में प्रत्येक कवि अपने कथ्य को दोनों प्रकार के बिम्बों के माध्यम से सम्प्रेषित करता गया है। नागरिक बिम्बों में सड़क, हत्या, मशीन, टाइपराइटर, खम्भा, रेल, कुत्ता, मकान आदि उपकरणों से निर्मित बिम्बों की प्रधानता है। इनमें कुछ बिम्ब बहुत ताजे और सार्थक हैं। उदाहरण के लिए धूमिल का निम्नलिखित बिम्ब दृष्टव्य है जिसमें समाजवाद की शक्ति और सीमा को एक लघु बिम्ब में पिरो दिया गया है – – –

मगर मैं जानता हूं कि मेरे देश का समाजवाद

---

(१) जलसाघर – ग्रांण्ड ट्रंक रोड – श्रीकान्त वर्मा – पृष्ठ – ५४

मालगोदाम में लटकती हुई
उन बाल्टियों की तरह है जिस पर 'आग' लिखा है
और उनमें बालू और पानी भरा है [1]

डॉ० चन्द्रकान्त वांदिवडेकर की मान्यता है : 'वास्तविकता की पहचान में घूमिल ने प्रचुर ताजे नये मौलिक बिम्ब दिए हैं - - - - केवल बिम्ब की समृद्धि को प्रतिमान माना जाय तो घूमिल को श्रेष्ठ कवि भी माना जा सकता है - - - -'[2] यह कथन तथ्यपूर्ण और सारगर्भित है। घूमिल ने परिवेश के अनेक पक्षों की असलियत को अपने बिम्बों द्वारा खोला है। कभी वे चेचक के दाग वाले चेहरे की हंसी को टेलीफोन के खंभे पर फंसी पतंग[3] के बिम्ब से जोड़ते हैं तो कभी देश में व्यापक रूप में व्याप्त बेईमानी, खूनखराबा और स्वार्थपरता को छोटे-छोटे बिम्बों में उजागर करते हैं - - -

मैंने अहिंसा को
एक सत्तारूढ़ शब्द का गला काटते हुए देखा
मैंने ईमानदारी को अपनी चोर जेबें
भरते हुए देखा
मैंने विवेक को
चापलूसी के तलवे चाटते हुए देखा - - - [4]

---

(१) संसद से सड़क तक - पटकथा - पृष्ठ- १३६
(२) धर्मयुग २५ जनवरी १९७६ - पृष्ठ- २१
(३) उस पर उमींद की तरह देती हुई हंसी
जैसे ; 'टेलीफोन' के खंभे पर
कोई पतंग फंसी है
और खड़खड़ा रही है
--- संसद से सड़क तक - मोचीराम - पृष्ठ- ४२
(४) संसद से सड़क तक - पटकथा - पृष्ठ-१३१

कुछ नागरिक बिम्बों में मानव अप्रतिहत शक्ति और उसकी जूझने की क्षमता का कथन भी है लेकिन ऐसे बिम्ब संख्या में कम हैं। श्रीमानन्द सारस्वत की निम्नलिखित पंक्तियों में मानव के अपौरुषेय पौरुष का अंकन है ---

यह तड़का हुआ आकाश
कभी भी गिर सकता है
मैंने
थरथराती हथेलियों पर
टिका रक्खा है इसे।[1]

लोकजीवन के उपकरणों और प्रसंगों से निर्मित बिम्बों में परिवेश की भयानकता या व्यक्ति की असहायता का कथन नहीं के बराबर है। यथार्थ वहां भी है लेकिन उसमें ऊब निष्क्रियता और थकन के स्थान पर उल्लास और सक्रियता अधिक है। चाहे मचान पर बैठी सहानुभूति द्वारा चिड़ियों को उड़ाने[2] का बिम्ब हो या बेटियों और बहुओं द्वारा अपनी आयु के दाने बिनने[3] का चित्र हो, प्राय: लोकजीवन की मस्ती, कर्मण्यता आदि की प्रतीति होती है। इस संदर्भ में गांव की जमीन पर खड़ी मंजुल उपाध्याय की निम्नलिखित पंक्तियों को देखा जा सकता है, हालांकि इनमें बिम्ब कम स्थूल शब्द-चित्र अधिक हैं---

कुएं की मुंडेर पर बैठकर

---

(१) असली कविता-१ गिरता हुआ आकाश - पृष्ठ-१३

(२) एक मचान पर बैठी सहानुभूति
चिड़ियों के झुण्ड उड़ाती है
--- अपनी शताब्दी के नाम - कहीं कुछ खोगया - दूधनाथसिंह पृष्ठ-१४

(३) धूप में / बेटियां और बहुएं / धूप में / अपनी अपनी / आयु के / दाने / बिन रही हैं।
--- माया दर्पण - श्रीकान्त वर्मा - पृष्ठ-५

गाय भैंस को पानी पिलाने के बहाने
पनघट पर खड़ी औरतों को
अपने गले का संगीत
सुनाकर या किसी दूसरे बहाने से
अपनी भीगती हुई मसें दिखाते हुए
खुद ही धन्य-धन्य हो लेता है[1]

कमलेश ने भी लोक जीवन के बहुत से बिम्बों को अपनी कविताओं में उकेरा है। अशोक वाजपेयी के शब्दों में 'कमलेश का काव्य संसार बिम्ब केन्द्रित और अपने समवयस्कों के मुकाबले सबसे ऐन्द्रिक व्यवस्था है।'[2] कमलेश के बिम्ब शुद्ध संवेदना से सने हुए हैं ---

वे रात को चले गये घोड़ा पर सवार, हम जो
सिवान तक पहुंचाने गए थे लालटेनें लेकर
वापस लौट आए दूर जाती टापों की आवाजें
सुनते देर तक थके-हारे सो गए, हमने फिर
सपने देखे शेष रात भर[3]

विपिन के बिम्ब रोजमर्रा की जिन्दगी में से बनते हैं और कवि उन्हें बोलचाल की भाषा में रखता है --- 'गली जिन्दगी उड़ेली जाने लगी / सांचों में जहां जहां खाली जगह मिली', मरता जा रहा है बदन / टीन के बक्स सा', 'देखूंगा चलती दुनियां को / बस्ते लिए बच्चों सा', 'अस्त-व्यस्त मेरा संसार / जब बैठ गया था थकी गृहिणी सा' - इन बिम्बों में घरेलू जीवन और उसका आस-पास उभर कर सामने आता है। उनके कविता संग्रह 'नंगे पैर' में इस प्रकार के बहुत से बिम्ब देखने को मिल जाते हैं।

---

(१) विचार कविता की भूमिका - प्रामाणिक ज्ञान, - पृष्ठ- २२७
(२) फिलहाल - पृष्ठ- २०
(३) जरत्कारु - 'कमलेश' पृष्ठ-

सामाजिक संदर्भों की व्याख्या और आलोचना करने वाले बिम्बों को ध्यान से देखने पर यह तथ्य हाथ लगता है कि इनमें से अधिकतर दृश्य बिम्ब हैं। दृश्य बिम्बों में भी अधिक संख्या उन बिम्बों की है जो गत्वर हैं। इनसे वर्तमान सामाजिक जीवन में व्याप्त सक्रियता और तेज रफ्तार संकेतित होती है। ध्वनि, गंध आदि से जुड़े बिम्ब भी साठोत्तरी कविता में हैं [1] लेकिन उनकी संख्या कम है। साठोत्तरी कवियों के कुछ बिम्बों के साथ प्रतीकात्मकता भी जुड़ी हुई है। ऐसे स्थलों पर प्रतीक स्पष्ट न होने की स्थिति में बिम्ब असंवेद्य और अग्राह्य बनकर रह गए हैं उदाहरण के लिए ---

धूप में सीधी सड़क के किनारे
थका हुआ भरती पत्तियों वाला वृक्ष
नीचे
सूखे पत्तों के ढेर से उठता धुआं [2]

साठोत्तरी काव्य-बिम्बों का क्षेत्र बड़ा व्यापक है। जब भी इन बिम्बों में पास पड़ोस के समाज से कुछ ऊपर उठकर कोई बड़ी बात कहने की कोशिश हुई है, प्राय: कवियों को सफलता मिली है। कन्हैयालाल नंदन का निम्नलिखित बिम्ब शीत युद्ध के वातावरण का सही चित्र खींचता है ---

सच है संगीनें सोयी हैं मोर्चे पर

---

(१) क- नालियों में बज रहा झाड़ू / और नहान घर का / फर्श बजता है
--- नाटक जारी है, बिल्कुल निजी संवाददाता द्वारा - जगूड़ी पृ० १३
ख- जूते से निकाले गये पांव - सा
महकता हूं
--- संसद से सड़क तक - धूमिल - पृष्ठ- २५
(२) आत्महत्या के विरुद्ध - पते का धुंआ - रघुवीर सहाय- पृष्ठ- ४२

लेकिन

अब भी घायल ईमान

घूम रहा है कराहता

माथे पर मरहम पट्टी बांधे [1]

कुछ कवियों ने अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं और संदर्भों की अभिव्यक्ति के लिये सपाटबयानी की तुलना में बिम्ब-विधान को वरीयता दी है। वियतनाम, अफ्रीका और चेकोस्लोवाकिया आदि देशों में हुई सैनिक कार्यवाहियों के प्रति कुछ साठोत्तरी कवियों ने बिम्बात्मक विरोध प्रकट किया है। [2]

अकविता सम्प्रदाय के बिम्बों का संसार प्रतिबद्ध कवियों के बिम्बों से बहुत कुछ अलग है। जगदीश चतुर्वेदी, गंगाप्रसाद विमल, श्याम परमार, आदि कवियों के बिम्ब यौन शब्दावली से लैस हैं। सामाजिक विसंगतियों की भर्त्सना करना इन्हें भी अभीष्ट है लेकिन उनका व्यवस्था विरोध गुमराह लोगों का विरोध लगता है। कम से कम इनके बिम्बों से तो यही बात साबित होती है। कहीं गदराई औरतों के बच्चे जनने[3] का चित्र है तो कहीं गर्म - गर्म दीवारों पर आलिंगित कोमलांग[4] दिखाई देते हैं। अकवियों ने किसी

---

(१) विचार कविता की भूमिका - अनवरतयुद्ध पृष्ठ- १७१

(२) भैंसों के झुण्ड से / रूसी टैंक /। धरती की छाती रौंदते चढ़ते हैं / आग उगलते हैं।/ रौशनदानों के कोनों में / बैठे कपोत, सिहरते हैं / सहमते हैं सिमटते हैं।

--- संदर्भ सं० विनय - अंगूरी बेल - कृष्णावात्स्यायन- पृष्ठ-५५

(३) बांझ देश में एक ट्यूब लगा दिया गया है अंधी सड़क पर
जहां जाकर गदराई औरतें बच्चे जनती हैं
और नपुंसक पिता ढोल बजाते लौटते हैं।

--- विजप - निरापद - जगदीश चतुर्वेदी- पृष्ठ- ६५

(४) अंधेरी सड़कों के कोनों पर लिपटे हुए: गृहविहीन पनपते प्यार
छोटी लेनों के वक्ष - स्तनों से सटे पूरे शरीर
गर्म गर्म दीवारों पर आलिंगित - कोमलांग।

--- विजप - लोग घूम रहे हैं - गंगाप्रसाद विमल पृष्ठ- २०

विराट सत्य को कहने के लिए जो बिम्ब विधान रचा है वह अपने
बावजूद भदेस और असंगत हो गया है ---

उगल रही है संस्कृति ढेर सारे पिस्सू और गुबरीले
ऊदबिल
नंगे ओठों पर कोढ़ के घाव लिए मानवता चीख रह
नीली पड़ी देह और सूजे हुए वक्ष लिए स्त्रियां
गर्भाधान से ह

२- प्राकृतिक बिम्ब

साठोत्तरी कविता में प्रकृति स्वतंत्र रूप से नहीं आई
बहुत थोड़े बिम्ब इस प्रकार के हैं जो प्रकृति के प्रति कवि की मुग्धत
या उदासीनता को व्यक्त करते हैं। ऐसे बिम्बों में स्तरीय शिल्प
देखने को मिलती है। इनमें कवि-कल्पना भी बेजोड़ है। कुछ पूण
संश्लिष्ट बिम्बों में दैनिक जीवन की घटनाओं से प्राकृतिक परिवेश
हलचलों को जोड़कर अच्छा काव्यत्व प्रदर्शित किया गया है। उदा
लिए आकाश में चमकती बिजलियों और बादलों के गर्जन को एक पा
दृश्य से जोड़ा गया पुरुषोत्तम खरे का यह बिम्ब---

नभ में निर्वसना बिजलियों का
उद्वेगपूर्ण नृत्य देखकर
बादल, सिनेमा हाल में बैठे
आवारा छोकरों की तरह
रह-रहकर आवाजें कस उठते हैं।[२]

इसी प्रकार सूर्यास्त होने को मदरसे की घटनाओं से

- -

(१) विजय - निरापद - जगदीश चतुर्वेदी - पृ

(२) कविताएं - १९६४ - आधीरात - पृ

करके गढ़ा गया सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का निम्नलिखित बिम्ब भी कलात्मकता में बेजोड़ है ---

आकाश की तख्ती पर
सितारों की बारहखड़ी लिखकर
चांद की बारात को लात मार लुढ़का
भाग जाता है रात मदरसे से
शरारती सूरज
और चिड़िया सुबह तक
हिसाब जोड़ती रहती हैं ।[1]

कुछ बिम्बों में कवि-मन की वह दहशत भी उतर आई है जो अपने आसपास के परिवेश के दबाव और प्रभाव से जन्मी है । इसका परिणाम यह होता है कि आसमान के सितारे तेंदुए के तेज दांत[2] सरीखे लगते हैं और ओस सीफ की तरह टपकती[3] प्रतीत होती है । साठोत्तरी कविता में प्रकृति से सम्बन्धित संहित बिम्ब भी उपलब्ध होते हैं । रंभाती गायें, चौकड़ियाँ भरते हिरन, छिटके हुए तारे, काले पड़ते जंगल आदि संहित बिम्बों के माध्यम से कभी परिवेश के उल्लास की ओर संकेत किया गया है तो कभी उसकी भयानक छाया बिम्बों पर पड़ती दिखाई देती है । साठोत्तरी कविता के प्राकृतिक बिम्बों को देखने पर एक बात बड़ी साफ हो जाती है कि प्रकृति के प्रति छायावादी या नयी कविताई रोमानी भावुकता इन बिम्बों में नहीं है । प्रकृति को लेकर स्थूल, श्रृंगारिक भावनाओं को उभारने की कोशिशें भी साठोत्तरी

---

(१) कल्पना - ७१ अंक १२ पृष्ठ- ६६ से उद्धृत

(२) तेंदुए ने / और तेज किए होंगे दांत / वहां / चमकता है तना / आसमान
--- ग्रीनविच - दूज का चांद - श्रीराम वर्मा - पृष्ठ- १६

(३) - - - - उड़ उड़कर पुन: / बैठ जाती है हवा / पेड़ पर / और वह फुरहरी भाड़ू / हिलने लगता है/ एक लय में / - - - ओस हमेशा सीफ की तरह टपकती है ; ढहलती ।
--- दर्शक दीर्घा से - बलदेव वंशी - पृष्ठ-

कविता में कम हैं। यही कारण है कि ये बिम्ब ताजे और नये हैं। इनमें स्थूल ऐन्द्रिकता के स्थान पर किंचित सूक्ष्मता है गो कि यह सूक्ष्मता वायवीयता की हद तक नहीं पहुंचती। इन बिम्बों में दृश्य और अनुभूति का अच्छा ताल मेल देखने को मिलता है। विजयदेव नारायण साही का निम्नलिखित प्रकृति बिम्ब उपर्युक्त स्थापनाओं को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त है ---

फहरे वाले शिवालय के बगल में
झुकी पीपल डाल
आचमन करती नदी का[१]

(अ-) नये उपमानों का प्रयोग

अलंकरण जैसी कोई चीज साठोत्तरी कविता में नहीं है। इस प्रकार की शास्त्रीय रूढ़ि के लिए इस विद्रोही कविता में गुंजाइश ही नहीं है। अलंकारों के नाम पर ले दे के उपमाएँ और रूपक मिलते हैं। लेकिन ऐसा नहीं है कि उन्हें उपमान, उपमेय, वाचक, धर्म, आदि को ध्यान में रखकर गढ़ा गया हो। प्राय: उपमाएँ नयी और अनूठी हैं तथा रूपक ताजे और संगत हैं। कमल, चन्द्रमा, मीन, हंस आदि परम्परागत उपमान तो छायावादोत्तर युग में ही अवकाश ग्रहण कर उठे थे, साठोत्तरी कविता तक आते-आते बिछली घास, कपोती सी चांदनी, बाजरे की कलंगी जैसे प्रयोग भी चुक से जाते हैं और उनका स्थान खाली कनस्तर, जलती सिगरेट, लटका हुआ हैंगर आदि ले लेते हैं। इस प्रकार साठोत्तरी कविता में प्रयुक्त उपमान कविता के शिल्प के क्षेत्र में हुए एक महत्वपूर्ण परिवर्तन की सूचना देते हैं। इस कविता से पूर्व प्रस्तुत जीवन का 'सत्य' एक दूसरे ही संसार से लिए गए उपकरणों से आंका जाता था, जब कि इस कविता में उपमेय और उपमान की दुनियां एक हो गई है। प्राय:

- -

(१) मछलीघर, संध्या चित्र - ५ पृष्ठ - १०१

कवियों ने अपने आसपास फैले हुए उपादानों को ही उपमान बनाकर प्रस्तुत किया है। साठोत्तरी कविता के कुछ उपमान प्रकृति से भी लिए गए हैं। लेकिन यह मानव जीवन से कोसों दूर जंगल-पहाड़ की प्रकृति नहीं है, रोज की धूप-चांदनी सर्दी गर्मी (~~आदि का अहसास कराने वाली प्रकृति ही साठोत्तरी कवियों~~) आदि का अहसास कराने वाली प्रकृति ही साठोत्तरी कवियों को प्रिय लगी है। इस प्रकार अध्ययन की सुविधा के लिए साठोत्तरी कविता में प्रयुक्त उपमानों को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है---

१- आम आदमी के दैनिक जीवन से लिए गये उपमान

२- प्राकृतिक उपमान

चूंकि साठोत्तरी कविता लुकमान अली, मोचीराम मंजूहालदार जैसे आम आदमियों के सुख-दु:ख का वास्तविक आलेख प्रस्तुत करती है। अत: यह स्वाभाविक है कि इस कविता में ऐसे उपमानों का प्रयोग अधिक हुआ है जो जन-जीवन के बहुत नज़दीक के हैं। लुकमान अली, मोचीराम जैसे चरित्र शहरी हैं अत: ग्रामीण जीवन से लिए गए उपमानों की अपेक्षा नागरिक उपमानों की तादाद अधिक है। कहीं 'रेलवे लाइन' के जाल सा[1] बिछा निजी कुछ है तो कहीं 'कुछ थर्ड क्लास कम्पार्टमेन्ट सी बेचैनी'[2] है। इसी प्रकार कहीं सिगरेट की तरह अहसास[3] दबा है तो कहीं सन्नाटा, कमीज और हैंगर सा[4] झूल रहा है कहीं गुस्से में 'अफसोस का गरम फाहा'[5] सेंकने

(१) निषेध- काले गोलदाग, सकलदीपसिंह - पृष्ठ- १६५
(२) संक्रान्त - ग्रीष्म की दोपहर - कैलाश वाजपेयी पृष्ठ- ४२
(३) उंगलियों में अहसास दबा है
सिगरेट की तरह
--- निषेध - मांओं की घृणा में बदलते हुए - परेश पृष्ठ- १२३
(४) सन्नाटा

और लटकी हुई कमरे की कमीज और हैंगर सा
झूल रहा था
--- प्रारंभ - उत्तरगान - विष्णुचन्द शर्मा पृष्ठ- १५८
(५) विचार कविता की भूमिका - सवद्व - चन्द्रकान्त देवताले- पृष्ठ- ६५

की भर्त्सना की गई है और कहीं इश्क में खाली कनस्तर की तरह ठोकर खाने की स्थिति पर व्यंग्य किया गया है ----

प्यार, इश्क खाते हैं ठोकर
आटे के खाली कनस्तर से[1]

आम आदमी की नियति को गड़े हुए खंभों सी[2] मानना या संतरे-काजू की तरह दूसरों के उपभोग की वस्तु के रूप में आंकना[3] इस बात के प्रमाण हैं कि साठोत्तरी कवि वास्तविकता से पूर्णत: अभिज्ञ है। कभी वह टूटे सेतु से[4] अपने वर्तमान की चर्चा करता है और कभी बहुत अफसोस के साथ अतीत का स्मरण ---

अरसा पहले मैं इस रास्ते से आया था
तब मेरी जवानी
धोबी के धुले कपड़ों की तरह ताजी-बुर्राक[5]

यूँ ढूढ़ने पर असंगति[6] विरोधाभास आदि अलंकारों के शास्त्रीय नमूने भी साठोत्तरी कविता में मिल जायेंगे लेकिन जैसा कि संकेत दिया जा चुका

- -

(१) वातायन कविता अंक- फरवरी-दिसम्बर ७३, अकाल ग्रस्त क्षेत्र की कविता - रामदेव आचार्य पृष्ठ-६

(२) संक्रान्त- प्रतीकों की दुनियां में- कैलाशवाजपेयी- पृष्ठ-१३

(३) संतरे सा छिला जाता था
कभी मैं
या कि काजू सा
कभी टूंगा गया हूं।

प्रारम्भ- याद ; तीन स्टेंजा - विष्णुचन्द्र शर्मा पृष्ठ-११५

(४) संक्रान्त - उस शर्म के बाद - कैलाश वाजपेयी पृष्ठ- ५०

(५) निषेध - शीर्षकहीन कविताएँ - रवीन्द्रनाथ त्यागी- पृष्ठ-१११

(६) सलाइयां मेरे सामने पड़ी थीं
और स्वेटर पड़ोस
में बुना जा रहा था

--- निषेध - आलस्य - सौमित्र मोहन पृष्ठ-८४

है उपमा रूपक ही इस कविता में विशेष उल्लेखनीय हैं। उपमाओं की व्यापक चर्चा ऊपर की जा चुकी है जहाँ तक रूपकों का प्रश्न है, लघु रूपकों से लेकर दूर तथा देर तक चलने वाले नये और सारगर्भित रूपक सहज उपलब्ध हैं।[१] भारत भूषण अग्रवाल जैसे कवि तो इसी बात के लिए चिन्तित हैं कि क्या रूपकों के बिना उनका सोचना नहीं हो सकेगा---

फिर रूपक
मुझको यह क्या हो गया है
रूपक के बिना क्या मैं सोच भी नहीं पाऊंगा।

कुछ स्थलों पर उपमा और रूपक का मिला-जुला प्रयोग भी है। सामान्य आदमी की नियति और सामयिक संदर्भों की वास्तविकता उभारने में ऐसे प्रयोग सफल हैं। रमेश गौड़ की 'अन्तिम युद्ध' कविता की कुछ पंक्तियाँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं ---

वक्त के गिद्ध की खाल में
बुरादे सा भर दिया गया[२]

अकविता की रूढ़ियों को ढोने वाली सर्वथा व्यक्तिगत कविताओं के उपमान जीवन के आसपास से लिए गए हैं लेकिन वे प्राय: भदेस बीभत्स और असुन्दर हैं। वहाँ यदि बादल कसाई की दुकान पर लटकने वाले बकरों की तरह हैं तो साँसे जीवित अधजले बच्चे [३] सी हैं। वीयर के समुद्र में स्तनों के

- -

(१) कब तक मैं सुविधा की छत पर चढ़ा / कविता के बाँस से / जिन्दगी की कटी पतंग फाँसने का यत्न करता रहूंगा।
--- एक उठा हुआ हाथ - भारत भूषण अग्रवाल - पृष्ठ-

(२) विचार कविता की भूमिका - पृष्ठ-२०८

(३) जीवित अधजले बच्चे सी
मेरी सूजी हुई साँसे
--- संक्रान्त - एक असमान्त अंत - कैलाशवाजपेयी - पृष्ठ-२८

तट और नितम्बों की मछलियां[1] देखना भी अकविताई मुद्रा है। स्वप्न दोष की तरह नग्न कर जाने वाली[2] बात भी कुछ ऐसी ही है। कुछ उपमान कोरे चमत्कार प्रदर्शन की सीमा तक पहुंचे हुए हैं, हालांकि जीवन से दूर वे भी नहीं हैं।[3] इस प्रकार के उपमान न तो साठोत्तरी कविता की मुख्य धारा में हैं और न शिल्प समृद्धि की दृष्टि से इनका कोई खास प्रदेय ही है।

प्राकृतिक उपमान:-

प्रकृति से लिए गए उपमान प्राय: व्यक्तिमन की टूटन, तकलीफ और हताशा को व्यक्त करते हैं। साठोत्तरी कवि दिखाता है कि किस प्रकार फूल सा मन यथार्थ की तेजधूप[4] को सहन नहीं कर पाता और दिवास्वप्नों की एक परछाईं से दूसरी तक[5] व्यर्थ की भाग दौड़ करता रहता है। निराश

---

(१) वीयर के समुद्र में / स्तनों के तट / नितम्बों की मछलियां/कमर के रेलिंग
--- निषेध- शीर्षकहीन कविताएं - रवीन्द्रनाथ त्याग- पृष्ठ- १०८

(२) एकान्त से एकान्त के बीच की राह
स्वप्न दोष की तरह नग्न कर जाती है
--- विचार कविता की भूमिका- आत्मरति - अचला शर्मा- पृष्ठ- २२२

(३)१-आसमान में सितारे
ज्यों पार्टी के पश्चात
बिखरी प्लेटें।
--- दिविक - इकाइयां - मीरा अहलूवालिया- पृष्ठ- ४७

२- पड़ा है इंतजार
कचरे के ढेर सा
--- अन्तर्कपोत - सं० वसन्तकुमार मिश्र - कालू राम कमलेश- पृष्ठ- ४५

(४) फूल की पंखुरी सा मन / धूप की एक लपेट में / मुरझा जाता है।
--- प्रारंभ - छोटा सा आघात - मनमोहिनी - पृष्ठ- १७८

(५) मैं बदली की धूप सा / परछाईं से / परछाईं तक भाग रहा हूं।
--- प्रारंभ : दिवास्वप्नों की शाम - कैलाशवाजपेयी- पृष्ठ- ५२

मन के भावों की टूटन को उल्कापिण्ड टूटने से[1] व्यक्त किया गया है। असफलता कभी - कभी व्यक्ति में आक्रोश जगा देती है और अक्सर यह आक्रोश नपुंसक और असामयिक होता है। इसे बेमौसमी बादल की गर्जना से सही उपमा दी गयी है ---

जो किसी बेमौसमी बादल सा
सारे शहर पर गरजता फिरता है[2]

उपर्युक्त सभी प्राकृतिक उपमान एक न एक बिम्ब उभारते हैं और जीवन की किसी न किसी सच्चाई से सम्बद्ध है। ये बड़ी आसानी से सिद्ध करते हैं कि प्रकृति साठोत्तरी कवि के लिए पलायन या एकान्त विलास की रंगभूमि न होकर जीवन का एक परिप्रेक्ष्य मात्र है, जिससे वह अनुभूति के अनुरूप उपमान चुनता रहता है।

मानवीकरण

साठोत्तरी कवियों ने कविता को शिल्प-समृद्धि देने के लिए प्रस्तुत का मानवीकरण भी किया है लेकिन यह मानवीकरण छायावादी किस्म के प्रकृति के मानवीकरण और नई कविता के भावुक मानवीकरण से एक बड़ा साफ अलगाव रहता है। छायावादी और नये कवियों का जोर मानवीकरण के माध्यम से चमत्कार दिखाने पर अधिक था, मानव नियति के विविध परिदृश्यों को रेखांकित करने में उनकी दिलचस्पी बहुत कम थी। संध्या को सुन्दरी बताना या उसे एक उदास लड़की के रूप में देखना कोई माइने नहीं रखते जब तक कि उस सौन्दर्य या उदासी का मानव जीवन से प्रत्यक्ष और परोक्ष सरोकार न हो। युवा कवि ने पूर्ववर्ती कविता की गलतियों से

---

(१) अगली कविता-२ औरसा. पृष्ठ-१४
(२) विचार कविता की भूमिका - तटस्थ- पवन कुमार- पृष्ठ-१६६

समक लेने का प्रयास किया। जब वेणुगोपाल अंधेरे के अण्डर ग्राउण्ड होने[1] की बात कहते हैं या जब ममता अग्रवाल विश्वास के लावारिस मटकने[2] की बात करती हैं तो ये कथन व्यक्तिगत अनुभवों से ऊपर उठकर व्यापक परिवेश के किसी न किसी परिदृश्य से जुड़े होते हैं। वेणुगोपाल की कविता का संदर्भ राजनीतिक है और इसका मर्म तब तक नहीं समझा जा सकता जब तक यह मालूम न हो कि यह अंधेरा व्यवस्था - विरोध का अंधेरा, कोई भयावह या डरावनी चीज न होकर भावी परिवर्तन की एक शुरूआत भर है। ममता अग्रवाल एक सामान्य सत्य को इक सामान्य उदाहरण से पुष्ट करती हैं उनके इस निष्कर्ष पर किसी को आपत्ति शायद ही हो कि संशय के ऊँचे - ऊँचे भवनों में विश्वास की ऐसी हैसियत भी नहीं है ---

जो
दफ्तर में
चपरासी की होती है[2]

साठोत्तरी कवियों ने मौसम को अजीबोगरीब विशेषणों से जोड़ा है। छिनाल, मौसम, मुर्दार मौसम, बेरोजगार सा मौसम, बदमिजाज मौसम आदि अधिकतर प्रयोगों में मौसम का मानवीकरण है। जाहिर है कि युवा कवि, मौसम अर्थात परिवेश को जीवन्तरूप में देखता है। उसके लिए मौसम के चुप और शान्त[3] रहने का अर्थ है जीवन का उल्लेखनीय हलचलों से

---

(१) विश्वास
लावारिस - सा
दर - दर भटकता है।

--- प्रारंभ - विश्वास : एक परिणति - पृष्ठ- १२०

(२) प्रारंभ - विश्वास एक परिणति - ममता अग्रवाल पृष्ठ- १२०

(३) मैंने उसे देखा था,
पिछवाड़े खड़े
तब वह चुप था और शान्त

--- विजप - मौसम - गंगा प्रसाद विमल - पृष्ठ- १३

कुछ देर के लिए कटजाना और बेजान हो रहना। इसी प्रकार तपते मौसम में आदमी के बर्फ होने[1] का मतलब यह है कि इस मौसम में फूल जैसे मनोभावों के कुचले जाने का भय[2] भी घुला मिला है। कहीं मौसम के ठंडेपन की शिकायत भी है और उसे सुलगाने के लिए कविताओं में लहूलुहान पंजा छापने की कोशिश भी---

मौसम सुलगाने के लिए / लहूलुहान पंजा / छापता हूं दीवालों पर / कविताओं में / उस बंद कपाट पर / जिसके भीतर कैद पड़ी है। उन्नत वक्षों वाली ऋतु।" (चन्द्रकान्त देवताले)

युवा कवि 'मौसम' का मानवीकरण करने के लिए जिस प्रकार के उपमान जुटाता है, चिरपरिचित मानवीय संसार से लिए गए हैं। इनसे कवि ने दुहरा काम लिया है, एक ओर वे कविता के कथन को असरदार बनाते हैं दूसरी ओर परिवेश की बेबाक आलोचना भी उनसे संभव हो सकी है। सुरेश ऋतुपर्ण की 'पतझर' कविता में जोर 'पतझर' के बिम्ब उभारने पर उतना नहीं है जितना समाज में व्याप्त अनैतिकता या स्वैराचार पर ऊंगली रखने का आग्रह प्रखर है ---

पतझर आ गया है।
डर से पीले पड़े

---

(१) सौगन्ध तैरती है हवा में
और मैं इस तपते मौसम में
बर्फ हो गया हूं

--- दिविक, आत्मबोध: एक अनिवार्यता - रामकुमार शर्मा - पृष्ठ- ५५

(२) और पगडंडियों पर
फूलों के कुचले जाने का डर
अब तक छितराया है

--- दिविक - आत्मबोध: एक अनिवार्यता - रामकुमार शर्मा - पृष्ठ- ५५

शाख के आलिंगन से छिटक

पत्ते फरने लगे

ज्यों

शादी शुदा प्रेमिका का

पति आ गया है ।[1]

इसी प्रकार रवीन्द्रनाथ त्यागी[2] पुरुषोत्तम खरे[3] आदि की कुछ पंक्तियाँ भी प्रकृति के मानवीकरण के बहाने परिवेश के अनेक परिचित बिम्बों और दृश्यों को कविता में ढाल देती है । वैसे यहां यह कहना अनुचित न होगा कि मौसम को जेबकतरों सा चौकन्ना कहना या हवा के फोंकों का शराबी की तरह लड़खड़ाना जैसे प्रयोग चमत्कार प्रदर्शन की प्रवृत्ति के अधिक निकट पड़ते हैं, अनुभूति की ताजगी जैसी कोई बात उनमें नहीं है । इस प्रकार साठोत्तरी कविता में प्राय: प्राकृतिक उपादानों का ही मानवीकरण किया है और उन्हें दैनिक जीवन से सीधे जोड़ दिया गया है ।[4] कविता में सपाट और ठेठ अभिव्यक्ति के आग्रह के बावजूद कवियों की इस प्रकार की रचनाएँ सिद्ध करती हैं कि बहुत से युवा कवियों में शिल्प के प्रति अच्छी खासी सजगता है, पिछले दौर के प्रगतिवादी कवियों की तरह उन्होंने शिल्प का बिल्कुल अवमूल्यन नहीं किया है । प्राकृतिक उपादानों से हटकर भी मानवीकरण के अच्छे उदाहरण मिल जाते हैं---

तेरी कोहनियों ने हंसकर

मुझे कनखियों से देखा[5]

---

(१) दिविक - आत्मबोध: रामकुमार शर्मा - पृष्ठ- १०५

(२) जेब कतरों सा चौकन्ना मौसम/ घुंघरू बांध नाचती हवाएं

--- निरोध - पृष्ठ- ११२

(३) हवा के फोंके / शराबी की तरह लड़खड़ाते हुए आते हैं ।

--- कविताएं १९६४ -- आधीरात

(४) जहाज पर उछलकर / अपना दस्तखत / किया है / लहर ने

--- माया दर्पण - जन्मपत्री - श्रीकान्त वर्मा पृष्ठ- ६५

(५) आत्म हत्या के विरुद्ध - पृष्ठ- २६

घ- साठोत्तरी कविता और छन्द

मुक्त छंद-

कविता में छन्द की वर्तमान प्रासंगिकता को लेकर समीक्षकों और विचारकों का बहुमत इस पक्ष में है कि आज की कविता छन्द की मोहताज नहीं है। डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव का विचार है कि छन्द की वापसी का सवाल ही नहीं पैदा होता है। जिन वर्णिक और मात्रिक छन्दों को आज नकार दिया गया है वे हिन्दी के नहीं संस्कृत के थे। यही कारण है कि मुक्त छन्द हिन्दी भाषा की ऐतिहासिकता बनकर सामने आया। 'हिन्दी भाषा के वाक्य गठन की अपनी नयी आवश्यकता के अनुरूप छन्द को तोड़ा अवश्य गया पर बुनियादी तौर पर छन्द को बनाये रखने के लिये -- छन्द को तोड़ने के लिए नहीं।'[1] विष्णुकान्त शास्त्री का अनुमान है कि परम्परागत छन्द यदि लौटेगा तो वह नये रूप में लौटेगा।[2] शमशेर बहादुरसिंह जैसे लोग छन्द की वापसी के पक्ष में हैं क्यों कि छन्दोबद्ध कविता का सम्प्रेषण जनता तक सरलता पूर्वक संभव है। जो भी हो साठोत्तरी कवि परम्परागत छन्दों के अनुशासन से न गुजरकर मुक्त छन्द में लिखना अधिक अच्छा समझता है। हालांकि छन्द मुक्ति का एक दुष्परिणाम यह भी हुआ कि 'ऐरे गैरे नत्थू खैरे' सभी कविता लिखने लगे हैं या कविता लिखने का ढोंग करने लगे हैं।

इसमें संदेह नहीं कि साठोत्तरी कवियों ने मुक्त छंद की सहायता से समकालीन वास्तव की सार्थक और गंभीर अभिव्यक्ति की है लेकिन साठोत्तरी कवियों की तुकप्रियता को देखते हुए ऐसा लगता है कि इनमें छन्द के प्रति मोह अभी विद्यमान है। लीलाधर जगूड़ी, श्रीकान्त वर्मा,

---

(१) धर्मयुग ४ फरवरी, १६७३ पृष्ठ- २१

(२) धर्मयुग ११ फरवरी, १६७३ पृष्ठ- २२-२३

घूमिल आदि कवि अपनी तुकप्रियता के लिए प्रसिद्ध हैं। ऐसा नहीं कि इन्होंने अच्छी और समर्थ तुकों से अच्छे कवित्व का प्रदर्शन नहीं किया है लेकिन कहीं-कहीं व्यर्थ की तुकबन्दी चमत्कृत भी नहीं कर पाती---

और मैं सोचने लगता हूं कि इस देश में
एकता युद्ध की और दया
अकाल की पूंजी है।
क्रान्ति---
यहां के असंग लोगों के लिए
किसी अबोध बच्चे के --
हाथों की जूजी है।[१]

कुछ साठोत्तरी कवियों ने परम्परागत छन्दों को किंचित संशोधन और परिवर्तन के साथ प्रयुक्त किया है और इसमें उन्हें अच्छी सफलता मिली है। मुक्तिबोध की 'पता नहीं' कविता की निम्नलिखित पंक्तियां मुक्त छन्द में हैं ---

तब बैठा एक
गंभीर वृक्ष के तले (आज)
टटोलो मन, जिससे जिस छोर मिले
कर अपने अपने तप्त अनुभवों की तुलना
घुलना मिलना[२]

शास्त्रीय दृष्टि से देखें तो यह पद्धरि पदपादाकुलक का स्वच्छन्द प्रयोग है। १६ मात्राओं वाले छन्द पद्धरि के आधे चरण को मधुमार कहते हैं। इसकी पहली पंक्ति मधुमार है। दूसरी पंक्ति से अन्तिम त्रिकल

---

(१) संसद से सड़क तक - अकाल दर्शन - घूमिल - पृष्ठ - २०
(२) चांद का मुंह टेढ़ा है - मुक्तिबोध पृष्ठ - ६

निकाल लिया गया है। यदि 'आज' जोड़ दिया जाये तो यह शुद्ध पद्धरि का चरण हो जायेगा। तीसरी पंक्ति से यदि 'टटो' को हटादें तो यह पद - पादाकुलक की पंक्ति हो जायेगी।[1] इसी प्रकार रघुवीर सहाय की निम्नलिखित पंक्तियां दोहे में हेर फेर करके निर्मित छन्द में लिखी गई हैं---

एक कोने में खड़ा था अंधेरा असहाय - २४
वहां मैं गया दूर जैसे बहुत कोई जाय[2] - २५

सव्यसाची, कैलाश वाजपेयी, राजीव सक्सेना आदि कवियों की अनेक रचनाओं में छन्दोबद्धता है लेकिन वह शास्त्रीय या रूढ़ किस्म की न होकर नयापन और ताजगी लिए है। निम्नलिखित कुछ उदाहरणों से यह बात अच्छी तरह सिद्ध हो सकती है। इन कविताओं में छंद है लेकिन उस छन्द का कोई शास्त्रीय नाम पिंगल ग्रन्थों में शायद ही मिले---

१- उपेक्षा के उबलते मरुस्थल में भी - २१
हिमालय सा सुदृढ़ जीना हमारा है - २१
सहे अन्याय के ज्वालामुखी निशदिन - २१
पहाड़ी ढाल सा सीना हमारा है[3] - २१

२- फरती मांप खांसता विस्तर चिथड़ा सांसे - २४
उबकाई - ६
धक्के देकर मुझे जिन्दगी आखिर कहां - २३
गिरा आयी[4] - ६

---

(१) धर्मयुग ११ फरवरी, १९७३ - डॉ० विजेन्द्रनारायण सिंह- पृष्ठ-२२
(२) आत्महत्या के विरुद्ध - हरी गहरी रात - पृष्ठ-२७
(३) अगली कविता - ३ नये सूर्य का जन्म 'सव्यसाची' पृष्ठ- ८
(४) संक्रान्त - मटका हुआ अकेलापन 'कैलाशवाजपेयी' पृष्ठ-४८-४९

३ - सबसे पहले सवाल उठा मंगलाचरण - २३
कौन करेगा किशनलाल खत्री सेवाराम आर्य या दद्दा रामशरण[१] -४०

४ - अनिश्चित तिथियों में जीते हैं सभी लोग -२३
साथियों को देते हैं चुपचाप गालियां -२३
उम्र ढ़लती जाती है रिसते जाते हैं दिन -२४
इश्क करने को रह जाती हैं बूढ़ी सालियां -२६
या खूसठ घरवालियां[२] -२३

इन उदाहरणों से इस निष्कर्ष पर पहुंचना कठिन नहीं है कि अच्छे साठोत्तरी कवियों का छन्द पर पूरा अधिकार है। किन्तु आज की काव्य संवेदना के अनुकूल छन्द को न पाकर उन्होंने मुक्त छन्द में ही लिखना अच्छा समझा है। नयी कविता के मुक्त छंद में अर्थ की लय की बात कही गई है। साठोत्तरी कविता में यदि लय है तो शब्दों की अर्थ की लय जैसी अमूल धारणा के लिए यहां अवकाश नहीं है।

---

(१) आवेग-६ 'असली इन्द्रजाल' - 'मणिमधुकर' पृष्ठ - ५६
(२) विजप - नगर यंत्रणा - 'जगदीश चतुर्वेदी' पृष्ठ - ६३

निष्कर्ष:

साठोत्तरी कविता में दो प्रकार के प्रतीक मिलते हैं। एक ओर इस कविता में परम्परागत प्रतीकों में नया अर्थ भरने की कोशिश की गई है तो दूसरी ओर बिल्कुल नये प्रतीकों को भी गढ़ा गया है। परम्परागत प्रतीक नये कवियों के प्रयोग से अपना पुराना अर्थ छोड़कर नया संकेत देते हैं। सामयिक संदर्भों के अनुकूल अनेक नये प्रतीकों का प्रतिस्थापन भी साठोत्तरी कवियों ने किया है। साठोत्तरी कविता के प्रतीक सामाजिक विसंगतियों को उजागर करने के साथ व्यवस्था द्वारा पंगु बना दिए गए मानव की नियति की ओर भी संकेत करते हैं। वैसे साठोत्तरी कविता में सपाटबयानी मिलती है परन्तु तब भी बिम्ब को इसमें छोड़ा नहीं गया है। साठोत्तरी कविता में बिम्ब का एक वर्ग मानवीय संदर्भों से संपृक्त है तो दूसरा प्रकृति से सम्बन्धित है। जीवन सत्य को अधिक सुव्यवस्थित ढंग से कहने के लिए बिम्ब विधान का प्रयोग किया गया है। प्राकृतिक बिम्ब साठोत्तरी कविता में बहुत कम मिलते हैं। इनके स्थान पर खण्डित बिम्ब देखे जा सकते हैं। साठोत्तरी कविता के बिम्ब विचार और अनुभूति का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत करते हैं। साठोत्तरी कविता में नये उपमानों का प्रयोग भी अपनी बात को अधिक असरदार बनाने के लिए किया है। वैसे कुछ उपमान आम आदमी के आस-पास से लिए गए हैं तो कुछ प्राकृतिक उपमान भी इस कविता में मिलते हैं। प्राकृतिक उपमान व्यक्तिमन की टूटन को उभारते हैं। मानवीकरण की प्रवृत्ति भी साठोत्तरी कविता में देखी जा सकती है जो अनुभूति की ताजगी के साथ शिल्प की सजगता का परिचय देती है। साठोत्तरी कविता मुक्त छंद में लिखी गई है। कुछ कवियों ने छंद को परिवर्तन तथा संशोधन के साथ प्रस्तुत किया है। आज की काव्य संवेदना के अनुकूल ही मुक्त छंद का प्रयोग हुआ कवियों

ने किया है। प्रतीक, बिम्ब, नये उपमान तथा छंद विधान की दृष्टि से साठोत्तरी कविता का शिल्प संतुलित सहज तथा यथार्थवादी है। इसमें आम आदमी के जीवन से जुड़ने की कोशिश स्पष्ट दिखाई देती है।